याद और यादगार

(स्मरण तथा स्मृति)

आयतुल्लाहिलउज़्मा सैय्यिदुलउलमा सै० अली नक़ी नक़वी ताबा सराह

अनुवादकः सय्यद जाफ़र असर नक़वी जायसी

क़ुरआन मजीद की एक आयत (वाक्य) है जिसमें अल्लाह मुहम्मद साहब से सम्बोधित होकर कहता है कि (ऐ मुहम्मद[स०]) ''याद दिलाते रहिए क्योंकि इसमें ईमान वालों का लाभ है।''

मुहम्मद साहब अल्लाह की ओर से कई कर्त्तव्यों के उत्तराधिकारी थे। उन्हीं में से एक कर्तव्य है 'तबलीग़' जिसका अर्थ है 'पहुँचाना' जैसा कि एक आयत में आदेश हुआ कि ''पहुँचा दीजिए उसे जो आपके अल्लाह की ओर से उतारा गया है।'' वरन् विशेष रूप से एक रसूल की हैसियत से एक पैग़म्बर (पहुँचाने वाला) का कर्तव्य यही बताया गया है अर्थात् ''रसूल का काम ही बस पहुँचाना होता है।''

दूसरा कर्त्तव्य है समाचार देना, जैसे क़ुरआन की एक आयत है कि ''मेरे बन्दों (दास) को समाचार दीजिए कि ''मैं महान प्रदानकर्ता, दया निधान हूँ।'' अनेकों विद्वानों के निकट 'नबी' शब्द का अर्थ है 'समाचार' इसी प्रकार आपके अनेकों नाम हैं जैसे शुभ समाचार देने वाला, डराने वाला। इसके अतिरिक्त एक कर्तव्य 'शिक्षा' है। एक आयत का अर्थ है किः- ''वह उन्हें पुस्तक तथा हिकमत की शिक्षा देता है।''

परन्तु जो आयत मेरे विषय का आधार है उसमें कर्तव्य विभिन्न प्रकार के हैं। उदाहरणार्थः- 'पहुँचाना' इस में सम्भव है वह बात सर्वप्रथम पहुँचाई जा रही हो। 'समाचार' देना अति सम्भव है कि इसके पूर्व वह समाचार न दिया गया हो। प्रकट (अभिव्यक्ति) प्रथम बार हुआ हो। शुभ समाचार सर्वप्रथम दिया जा रहा हो। शिक्षा प्रथम बार दी जा रही हो। परन्तु यहाँ कहा जा रहा है- ''याद दिलाते रहिए।''

इस से प्रदर्शित है कि पाठ पढ़ाए जा चुके हैं, समाचार दिया जा चुका है परन्तु जन्मदाता को यह स्वीकार है कि चिन्ह ताज़ा होता रहे और मनुष्यों के मस्तिष्क से यह स्मृति मिटने न पाए।

क़ुरआन मजीद ने यह कहा कि याद दिलाते रहिए, परन्तु वे क्या वस्तुएं हैं जिनका याद दिलाना जन्मदाता को स्वीकार है, इसे क़ुरआन प्रस्तुत नहीं करता। फिर इसे क्योंकर समझें? मैं समझता हूँ कि यह उसी के द्वारा समझा जा सकता है कि जिसके द्वारा क़ुरआन के प्रत्येक आदेश का विवरण समझा जाता है।

क़ुरआन ने कहा ''नमाज़ पढ़ो'' नमाज कैसे पढ़ो? इसका कोई विवरण नहीं। दीनियात की प्रथम पुस्तक जो बच्चों को पढ़ाई जाती है उसमें भी नमाज़ की तरकीब लिखी होती है परन्तु क़ुरआन में नहीं। 'वज़ू' की तरकीब है, 'तयम्मुम' की तरकीब है परन्तु 'नमाज़' की तरकीब क़ुरआन में आरम्भ से अन्त तक कहीं नहीं। हाँ किसी स्थान पर मिलेगा ''रुकू' करने वालों के साथ 'रुकू' करो'' अब इसी सूची में सम्मिलित कर लीजिएः ''अल्लाह के दरबार में सजदा करते हैं वे सब जो धरती और आकाश पर हैं।'' इसे देखकर लिख लीजिए सजदा- कहीं है? ''कहो कि अल्लाह सबसे बड़ा है।'' इसको भी लिख लीजिए। ''प्रशंसा करते हुए अल्लाह की 'तस्बीह' करो।'' इसे 'तस्बीह' लिखिए। ''अपने अल्लाह के नाम के साथ पढ़ो।'' अब पढ़ने का ढंग भी लिख लीजिए। परन्तु

विचार करने योग्य प्राथमिक दृष्टिकोण यह है कि यह तो आप को ज्ञात ही है कि ये सब नमाज़ के अंग हैं परन्तु क़ुरआन में यह कहाँ है कि ये अंग उस नमाज़ के हैं जिसका ''नमाज़ पढ़ो'' में आदेश दिया गया था। उसी क़ुरआन में रोज़ा रखने का भी आदेश है परन्तु वह भी नमाज़ का अंग नहीं है। 'हज' का भी आदेश है परन्तु वह नमाज़ का अंग नहीं एक प्रथक इबादत (पूजा) है। इसी प्रकार सम्भव था कि 'रुकू' पृथक इबादत हो। सिजदा पृथक इबादत हो, इसी प्रकार नमाज़ के समस्त अंग पृथक इबादत हों और फिर सलवात कोई अन्य वस्तु हो। यह किसने बताया कि ये सब नमाज़ के अंग हैं।

अच्छा, यदि किसी प्रकार इसे समझ भी लीजिए तो ये सब पृथक हैं। यह मिश्रण कैसे हुआ? यदि कोई मुसलमान पहले सजदा (धरती पर मस्तक रखना) करे फिर 'रुकू' (झुकना) करे। फिर क़याम (खड़ा होना) कर ले फिर सूरों को पढ़कर 'तस्बीह' पढ़े, फिर अल्लाहु अक्बर (अल्लाह सब से बड़ा है) कहे। तो क़ुरआन के बताए हुए सब अंश तो हो गए परन्तु क्या नमाज़ हुई? (ये सब नमाज़ के अंग हैं परन्तु इस प्रकार क्रमबद्ध हैं: सर्वप्रथम 'क़याम' फिर 'रुकू' फिर सजदा, फिर तस्बीह। ज्ञात हुआ कि क़ुरआन को देखकर नमाज़ नहीं हुई मुहम्मद साहब की रचना को देखकर नमाज़ हुई है।

इसी प्रकार क़ुरआन में ज़कात (दान) देने का आदेश है परन्तु यह नहीं बताया गया कि दान कैसा हो, कितना दिया जाए, इन समस्त बातों का कोई उल्लेख नहीं है। हज को ले लीजिए। क़ुरआन कहता है ''मुसलमानों का काबा जाना अनिवार्य है।'' परन्तु वहाँ जाकर क्या करे इन सब बातों का कोई वर्णन नहीं है।

अब प्रत्येक मुसलमान को यह विचार करना चाहिए कि क्या क़ुरआन पढ़ाने अथवा बताने वाला यह भूल गया कि नमाज़ का ढंग भी बताना है? ज़कात का आदेश तो दे दिया और जल्दी में यह बताना भूल गया कि कितनी ज़कात दो? 'हज' का आदेश तो दे दिया परन्तु ग़ल्ती से उसका वर्णन न कर सका।

आम शिक्षक से भी यह भूल दो एक बार होगी परन्तु प्रत्येक बार भूल हो इसे बुद्धि स्वीकार नहीं करती। यहाँ किसी दो एक वस्तु का वर्णन शेष नहीं रह जाता तो कोई अशिक्षित काफ़िर यह समझ लेता कि यह भूल है परन्तु प्रत्येक स्थान पर मुख्य आदेश तो है, उसका सविस्तार विवरण नहीं है।

फिर यह शिक्षक तो मनुष्यों में से नहीं है। मुसलमानों के निकट तो क़ुरआन के शिक्षक तो मुहम्मद साहब भी नहीं हैं कि एक साधारण मनुष्य होने के नाते उसे भूल जाने की सम्भावना की जाए- यह क़ुरआन बताने वाला तो अल्लाह है और अल्लाह से भूल नहीं हो सकती।

क़ुरआन की आयत है जिसका अर्थ है ''तुम्हारा परवरदिगार भूलने वाला नहीं है'' फिर जब भूल से विवरण नहीं छोड़ा गया तो यह तो यह मानना पड़ेगा कि यह विवरण जानबूझकर छोड़ा गया और इस आधार पर मैं यह कह सकता हूँ कि क़ुरआन उतरा है इसलिए कि यह पर्याप्त न हो।(1) अल्लाह यह चाहता है कि रसूल से संसार वंचित न रह जाए। उसने क़ुरआन में हमें प्रत्येक स्थान पर रसूलुल्लाह का मोहताज बना दिया क़ुरआन कह रहा है कि ''नमाज़ पढ़ो और ज़कात दो'' परन्तु जब तक रसूल से न पूछोगे नमाज़ पढ़ ही नहीं सकते। क़ुरआन 'हज' का आदेश दे रहा है परन्तु आप 'हाजी साहब' बन ही नहीं सकते जब तक कि रसूल से हज का विवरण न पूछ लें। अर्थात क़ुरआन आश्रय ले रहा है एक मुख्य शिक्षक का। इसी कारण जब अल्लाह से प्रेम करने वालों की विशेषता बताई गई तो क़ुरआन ने कहा- ''यदि अल्लाह से प्रेम करते हो तो वह कार्य करो जो रसूल करता और बताता है।

(1) मुहम्मद साहब ने अपनी मृत्यु के पूर्व अपने साथियों से कहा था मैं तुम्हारे बीच दो वस्तुएं (एक क़ुरआन, दूसरे मेरे परिवार वाले छोड़े जा रहा हूँ इनमें से यदि किसी को भी छोड़ दिया तो पथ भ्रष्ट हो जाओगे इस पर प्रथम ख़लीफ़ा ने कहा था कि हमारे लिए क़ुरआन प्रयाप्त है, आपके परिवार की ज़रूरत नहीं!)।

कोई समझ रहा था, अल्लाह से प्रेम करना हो तो अल्लाह के नाम की रट लगाते हुए ''हु, हक़'' करो, पटरे पर शरीर को टाँग लें, कीलों पर, परन्तु क़ुरआन ने यह सब कुछ नहीं कहा, उसने नाम लेकर कोई कार्य बताया ही नहीं। उसने तो एक व्यक्ति के पद-चिन्हों को प्रस्तुत कर दिया। अब प्रलय तक प्रत्येक मुसलमान को

अल्लाह से प्रेम करना है जब तक ख़ुदा, ख़ुदा है और बन्दे, बन्दे हैं। इस प्रेम के लिए क़ुरआन ने किसी कार्य की सूची नहीं बताई कि उसे याद कर लें और अल्लाह से प्रेम हो जाए। क़ुरआन ने तो यह कहा कि अल्लाह से प्रेम करते हो तो उनके पद-चिन्ह पर चलो। अब यदि क़ुरआन के आदेशानुसार इस पद-चिन्ह पर दृष्टि गाड़ दी तो फिर यदि उस 'आयत' को भूल भी जाएं तब भी वह पद चिन्ह मंज़िल तक पहुँचा देगा। परन्तु यदि वह पद-चिन्ह अदृष्य हो गया तो क़ुरआन के इन शब्दों का याद कर लेना मंज़िल तक नहीं पहुँचा सकता।

ज्ञात हुआ कि मंज़िल क़ुरआन में है और उस मंज़िल का विवरण पैग़म्बर के कार्यों में है। इसका सविस्तार विवरण समझने का उपाय यह है कि पैग़म्बर के कार्यों को देखिये और पैग़म्बर साहब जिन वस्तुओं को याद दिलाते रहे हों वही जन्मदाता को स्वीकार है। इसके अतिरिक्त 'शरीअत' (इस्लामी शिक्षाएं) की वह प्रणाली देखिये जिसे मोहम्मद साहब ने पहुँचाया इनमें जिन स्मृतियों के स्थापित रखने की व्यवस्था की गई हो, समझिये कि वही जन्मदाता को प्रिय है।

जब हम इस प्रकार देखते हैं तो निःसन्देह मुख्य ध्येय तो अल्लाह की याद है पैग़म्बर साहब का यही संदेश था कि:- ''कहो कि अल्लाह के अतिरिक्त कोई ख़ुदा नहीं (इसमें) तुम्हारा ही लाभ है।''

यही क़ुरआन कह रहा था कि याद दिलाइए इस याद दिखाने में उन्हीं का नाम है। अब क़ुरआन और रसूल के कथन से यह प्रमाणित हो गया कि जिनके विषय में याद दिलाया जाए उस से लाभ उन्हीं को होगा जो स्मृति स्थापित रखें न कि उनको जिनका स्मरण हो।

अतः अल्लाह के स्मरण से अल्लाह का नहीं बन्दों का लाभ है और यह वह स्थान है कि अल्लाह का कोई भी मानने वाला यह कल्पना भी नहीं कर सकता कि वह अल्लाह को लाभ पहुँचाएगा। उसको तो किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं यदि समस्त संसार उसके आगे अपना मस्तक झुका दे तब भी उसके वैभव में कोई वृद्धि नहीं होगी और यदि सब मिलकर उस से इनकार कर दें तब भी उसके वैभव में कोई कमी नहीं होगी। नास्तिक होना तो आज के प्रगतिशील काल में प्रगति का चिन्ह समझा जाता है अर्थात् हृदय एवं मस्तिष्क में तो चाहे ख़ुदा हो परन्तु ज़बान पर न हो। ये जब कहने लगते हैं कि ख़ुदा कोई वस्तु नहीं तो समझने लगते हैं हम बड़े आदमी हो गए। ये नास्तिक ख़ुदा से बग़ावत करते हैं परन्तु यह इन्कार उसी समय तक है जब तक कि ''वह'' (अल्लाह) यह ज़बान चलाता रहता है और इसे आपकी इच्छाओं के वश में दे रखा है। उस समय तक चाहे मानिए चाहे न मानिए। परन्तु यदि वह इस ज़बान को मौन कर दे तो बात तो कर लीजिए। हाथ आपके वश में दे रखे हैं, चाहे गिरने वालों को आश्रय दीजिए चाहे किसी का घर जलाइए परन्तु अल्लाह उनकी शक्ति छीन ले तो फिर उन से कोई कार्य ले के देखिए। पैर आपके वश में दे रखे हैं चाहे ठीक मार्ग पर चलिए चाहे पथ भ्रष्ट हो जाइए परन्तु यदि वे व्यर्थ कर दिये जाएं तो स्थान से हिल तो लीजिए। इस्लाम की माँग तो केवल शराफ़त (भद्रता) से है, अर्थात जिसको बल पूवर्क मनवाया जाए उसे प्रसन्नता के साथ मानिए वरन् जिस बात को वह मनवाना चाहेगा उसे तो प्रत्येक दशा में मनवा लेगा अन्तर केवल यह होगा कि ऐसी परिस्थिति में वह पुण्य का भागी न होगा।

हमने सुना है कि कुछ देशों में यह दावा (प्रतिज्ञा) किया गया है कि हमने ख़ुदा को अपने यहाँ से देश निकाला दे दिया है, परन्तु क्या वह निकल भी गया? कोई अल्लाह के राज्य से बग़ावत का कितना ही बड़ा दावेदार क्यों न हो, मैं तो जब मानूँ कि जब वह भेजे तो ये न आएं, और वह बुलाए तो ये जाएं नहीं। परन्तु घटना की परिस्थित तो यह है कि जब उस ने भेजा तो ये आए और जब बुलाएगा तो मौनता के साथ हाथ पसारे चले जाएंगे। साँस भी तो नहीं ले सकेंगे। फिर जिसे किसी वस्तु की आवश्यकता न हो उसको हमारी याद से क्या लाभ पहुँच सकता है?

दूसरी याद रसूलुल्लाह[स०] की याद है। प्रत्येक विचार के मुसलमानों के निकट अज़ान में यह कहना आवश्यक है कि ''मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं'' फिर किसी इस्लामी पुस्तक में 'अज़ान' देने वालों को यह आदेश नहीं कि वह इस शपथ को दो बार

कहे परन्तु रसूल की गवाही एक बार हो जिसके अल्लाह और बन्दों का अन्तर ज्ञात हो जाए। या यह कि ''अल्लाह सब से बड़ा है'' को उच्च स्वर से कहे और ''मोहम्मद अल्लाह के रसूल हैं'' को कुछ धीरे से कहे कदापि ऐसा कोई आदेश नहीं वरन् दोनों वाक्यों को एक ही प्रकार कहना है। इसके पश्चात् 'अक़ामत' है। आप 'अक़ामत' न कहिए वह दूसरी बात है परन्तु यदि 'अक़ामत' कहियेगा तो उन्हीं दोनों वाक्यों को उसी प्रकार कहना होगा।

अब स्वयम् नमाज़ में आइये प्रत्येक दूसरी रकात के पश्चात जो तशह्हुद पढ़ा जाता है उसमें कहा जाता हैः- ''मैं गवाही देता हूँ के अल्लाह के अतिरिक्त और कोई दूसरा ख़ुदा नहीं वह एक एक है और उसका कोई साथी नहीं, मोहम्मद साहब उसके बन्दे और रसूल हैं।''

अब मुसलमानों को विचार करना है नमाज़ ऐसी मुख्य पूजा में रसूल का नाम लेना और उनकी कल्पना करना पाप तो नहीं होगा? याद रखिये कि पाप से प्रत्येक मुसलमान को बचना चाहिए और प्रत्येक मुसलमान को नमाज़ भी पढ़ना है तो अब हम सब एक नौका पर सवार हैं। नमाज़ में रसूल सम्मिलित हो गए हैं फिर भी पाप नहीं है। यह रहस्य प्रत्येक मुसलमान को समझना और समझाना है। अब जो हल मैं प्रस्तुत करूँ तो या तो संसार उसे स्वीकार करे और मन चाहे तो मेरा कृतज्ञ हो कि मैंने सबका बोझ हलका कर दिया। नहीं तो स्वयम् कोई हल प्रस्तुत करे मैं उस पर विचार करने के लिए तैयार हूँ।

मैं कहता हूँ कि रसूल की जो प्रशंसा हो रही है वह क्या है? यदि यह कहा जा रहा हो कि किसी बड़े बाप के बेटे हैं, अथवा यह कहा जाए कि वे बनी हाशिम के परिवार से सम्बन्ध रखते हैं, अथवा यह कि वे अरब के वैभवशाली राजा हैं तो यह अल्लाह की प्रशंसा नहीं होगी परन्तु यह कहना कि मोहम्मद अल्लाह के रसूल और उसके मुख्य बन्दे हैं तो यह केवल अल्लाह की प्रशंसा है। इस से यह सिद्धान्त स्थापित होता है कि यदि रसूल की प्रशंसा सांसारिक विशेषताओं के दृष्टिकोण से हो तो वह केवल रसूल की प्रशंसा है। बस अब इस सिद्धान्त को सुरक्षित रखना चाहिए।

रसूल का आदर भी यदि बड़े बाप के बेटे के दृष्टिकोण से हो, बनी हाशिम परिवार के माननीय व्यक्ति के दृष्टिकोणसे हो, अरब के महान राजा के दृष्टिकोण से हो तो वह केवल रसूल का आदर होगा, परन्तु जो आदर अल्लाह के रसूल के दृष्टिकोण से हो वह अल्लाह का आदर होगा। अब जो मुसलमान रसूल के रौज़े का चुम्बन लेता है उस से पूछिए कि क्या वह अरब देश के वैभवशाली राजा की 'ज़रीह' का चुम्बन ले रहा है अथवा रसूलुल्लाह की ज़रीह का? यह चुम्बन रसूल के मज़ार का है परन्तु इबादत (पूजा) अल्लाह की है। बस अब इसी सिद्धान्त को गाँठ में बाँध लीजिए कि यदि किसी का आदर उसकी सांसारिक विशेषताओं के दृष्टिकोण से किया जाए तो यह उसका व्यक्तिगत आदर होगा, परन्तु यदि वह आदर अल्लाह के सम्बन्ध से हो तो वह केवल अल्लाह का आदर होगा, और किसी प्रकार पाप नहीं हो सकता। अतः यदि किसी ऐसे व्यक्ति का आदर हो जो अल्लाह के मार्ग में भेंट चढ़ा हो तो उस आदर को भी जन्मदाता का आदर समझना चाहिए।

यदि सांसारिक विशेषताओं के दृष्टिकोण से मुक़ाबला होता तो दमिश्क़, बग़दाद और कुर्तुबा के वैभवशाली राजमहलों से सिर न टकराते। अरे जो लुटे हुए दर को याद करें उनकी क्रियाओं में अल्लाह के सम्बन्ध के अतिरिक्त और क्या भावनाएं हो सकती हैं जो उनमें विद्यमान हैं और जो उन्हें आदर करने पर विवश करती हैं?

अब यह विचार करना है कि अज़ान में रसूल का नाम सम्मिलित हुआ अक़ामत तथा नमाज़ में सम्मिलित हुआ तो क्या सब मुहम्मद साहब ने स्वयं कर दिया? केवल इस कारण कि मेरा नाम शेष रहे? यदि किसी ने यह विचार कर लिया तो रिसालत पर से विश्वास (ईमान) समाप्त हो गया। फिर क़ुरआन में देखिए अल्लाह कह रहा है कि ''हम ने आप के नाम को उच्च किया'' क़ुरआन में जब अल्लाह तथा अल्लाह की विशेषताओं का विवरण होता है तो ''मैं'' कहा जाता है ताकि यह न ज्ञात हो कि अल्लाह का कोई साथी भी है। जैसे ''मैं तुम्हारा परवरदिगार हूँ'' परन्तु जहाँ क्रियात्मक शक्ति प्रदर्शित होती है वहाँ ''हम'' कहा जाता है जहाँ ये शब्द हो वहाँ

समस्त शक्तियों को एक चैलेंज होता है जैसे ''हमने आपके वंश को वृद्धि प्रदान की।'' अब इसे मिटा कौन सकता है?

''हमने क़ुरआन उतारा है और हम इसकी रक्षा करने वाले हैं।'' अर्थात इसे समाप्त कौन कर सकता है? इसी प्रकार कहा गया ''हमने आप के नाम को उच्च किया'' अब इसे नीचा कौन कर सकता है? ज्ञात हुआ कि यह रसूल का प्रबन्ध नहीं वरन् अल्लाह की ओर से प्रबन्ध है और यह कोई नई बात नहीं।

क़ुरआन में है ''तुम मुझे याद करो, मैं तुम्हें याद करूँगा'' अर्थात बदला कार्य कुशलता का मिलता है। हम उसे याद करेंगे अपनी समस्त विवशता के साथ, वह हमें याद करेगा अपनी महानता की शक्ति के साथ। अब याद करना तो सीमित वस्तु है परन्तु जो उसके वर्णन को स्थापित करे वह उसके लिए क्या करेगा। यही कि वह उसके वर्णन को सर्वदा के लिए स्थापित कर दे।

यहाँ तक ख़ुदा और रसूल के वर्णन की मंज़िल तय हुई अब कोई और वस्तु जिसका वर्णन रसूलुल्लाह समय-समय पर करते रहे हों वह चाहे कोई व्यक्ति हो या कोई घटनाएं। अन्वेषण से हमें रसूल के चरित्र में घटनाएं तथा व्यक्ति दोनों ही मिल जाते हैं, समय-समय पर जिनका वर्णन रसूल का चरित्र और उनकी सुन्नत रहा।

वे कोई और व्यक्ति नहीं रसूल के घर वाले हैं। वे रसूल के विशेष सम्बन्धी हैं अर्थात रसूल की एक पुत्री है जिसका वर्णन बारम्बार कर रहे हैं। एक दामाद है जो दामाद होने के पूर्व आपका भाई भी था। और दो नाती हैं ये वे हैं जिनका वर्णन बारम्बार कर रहे हैं।

कुछ व्यक्ति वे हैं जिनके मस्तिष्क में यह चुभन है कि दामाद, पुत्री तथा नातियों का वर्णन बारम्बार क्यों? इस स्थान पर मैं प्रत्येक बुद्धि रखने वाले को सम्बोधित करता हूँ। स्मरण रखना चाहिए कि दामाद, पुत्री तथा नातियों का स्थान अपने पश्चात् है। असली प्रेम अपनी ज़ात से होता है और वही, पुत्री, दामाद तथा नातियों के प्रेम का कारण होती है।

अब एक मुसलमान वहाँ से आगे बढ़ गया जहाँ, अज़ान, अक़ामत तथा नमाज़ में अपना नाम रखा जा रहा था वहाँ ये विचार न किया कि अपने नाम के लिए इस्लामी शिक्षाओं के आदेश बना दिये हैं तो अब रसूल के घर वालों तक पहुँचकर क्यों अपने ईमान को ख़तरे में डाल रहा है।

यदि अपने नाम का रखना अल्लाह के कर्तव्यों के अनुभव से है तो घर वालों का बारम्बार वर्णन करना भी उसी अनुभव का परिणाम है। वह न तो इस कारण था कि मेरा नाम रहे, न इस कारण है कि ये मेरी पुत्री और दामाद हैं- वरन् उनके नाम के शेष रहने से इस्लाम शेष है और ये उनके घर वाले भी कुछ ऐसे ही हैं कि उनके नाम से अल्लाह के ध्येय शेष हैं।

अल्लाह की याद न अल्लाह के लाभ के लिए थी न रसूल की याद रसूल के लाभ के लिए, और न उनके घर वालों की याद उनके घर वालों के लाभ के लिए है वरन् यह सब अल्लाह के बन्दों के लाभ के लिए था। अब विचार कीजिए और समझिये कि रसूल के घर वालों के स्मरण से संसार निवासियों को क्या लाभ है?

कहा जाता है कि इन व्यक्तियों की इतनी प्रशंसा की जाती है जैसे ज्ञात होता है कि पैग़म्बर के पास और कोई काम ही न था और इसे इस प्रकार कहा जाता है कि सुनने वाला जैसे लज्जित हो जाता है। परन्तु मैं तो नेत्र में नेत्र डालकर कहूँगा कि यह प्रश्न ऐसा है जैसे कोई कहे कि ये रसूल कैसे हैं कि बस हर समय क़ुरआन ही पढ़ा करते हैं उन्हें कुछ और आता ही नहीं। क्या यह प्रश्न कोई विशेषता रखता है?

महाश्य! ये उसी क़ुरआन की शिक्षा के लिए आए हैं तो क़ुरआन नहीं तो क्या ''तौरेत'', ''ज़बूर'' और ''इन्जील'' पढ़ें। जिस पुस्तक के प्रचार के लिए आए हैं उसी को पढ़ते हैं। बस इसी प्रकार जब क़ुरआन की शिक्षा देते हैं तो जो उसकी अति सुन्दर कीर्तियाँ हैं उन्हीं को सम्मुख लाते हैं।

नूतन शिक्षा प्रणाली यह है कि डाइरेक्ट शिक्षा न हो वरन् किसी के द्वारा हो, अर्थात् अक्षर याद न कराइए, चित्र दिखाइए। बालक समझेगा चित्र देख रहा हूँ और इसी आधार पर उसको वे अक्षर याद हो जाएंगे। संसार इस शिक्षा के रहस्य को आज समझा है परन्तु ख़ुदा और

रसूल इस रहस्य को पहले ही से जानते थे। क़ुरआन का पढ़ना डायरेक्ट शिक्षा थी और घर वालों को दिखाना किसी के द्वारा शिक्षा थी।

जिस प्रकार उस समय शिक्षा दो प्रकार से दी जा रही थी वही परिस्थिति आज भी है, हमारी मजलिसें भी स्कूलों की भांति पाठशालाएं हैं परन्तु स्कूल हैं डाइरेक्ट शिक्षा के केन्द्र और मजलिसें शिक्षा की वे केन्द्र हैं जहाँ किसी के द्वारा शिक्षा दी जाती है। यहाँ हम रोने के लिए आते हैं और अनेकों पाठ पढ़ कर चले जाते हैं। सत्य उनके कानों तक पहुँच जाता है। हुसैन के वर्णन के साथ समस्त पैग़म्बरों की घटनाएं स्मरण हो जाती हैं और इस्लाम की समस्त शिक्षाएं उन्हें ज्ञात होती रहती हैं सत्य की सभी पथ प्रदर्शकों की स्मृति हुसैन की स्मृति में है और क्यों न हो इस बलिदान से सबका बलिदान है। क़ुरआन ने एक स्थान पर एक वस्तु का नाम लेकर कहा है कि:- ''अल्लाह के दिनों की याद ताज़ा करो।'' अल्लाह के दिन कौन हैं? वे जिन में किसी असत्य तथा सत्य की बीच संघर्ष हुआ हो। जिस दिन उसके मार्ग में कोई महान कार्य हुआ हो- इस से प्रमाणित है कि ऐसे किसी दिन की याद स्थापित करना 'बिदअत' (पाप) नहीं है। दिन याद दिलाया जा रहा है तो तिथि के अनुकूल किसी दिन की याद स्थापित करना 'बिदअत' नहीं हो सकती। अतः इस्माईल के बलिदान की याद तिथि की अनुकूलता के साथ ही स्थापित है और इस्लाम के सभी सम्प्रदाय इस से सहमत है कि यह याद स्थपित रखी गई है 'ईदुल-अज़्हा' के नाम से। यह स्मृति है इस्माईल के बलिदान की।

अब मुसलमान विचार करें कि किसी दिन एकत्र होकर इस्माईल का वर्णन हो जाया करता परन्तु वही दिन नियुक्त कर दिया जिस दिन बलिदान हुआ था 10 बक़रीद और केवल बलिदान का दिन ही नहीं वरन् उसके पूर्व एक दिन 'अरफ़ा' को भी याद रखा गया। बक़रीद के उन दस दिनों को यह विशेषता दे दी गई कि उन्हीं दिनों में हज किया जाता है।

फिर इस्माईल के लिए बक़रीद के प्रथम 10 दिन यादगार (स्मृति) बन गए तो हुसैन के लिए मोहर्रम के प्रथम 10 दिन क्यों न यादगार रहें। यह बलिदान 10 मोहर्रम को दिया गया परन्तु 10 मोहर्रम का जो दिन है वह इस बलिदान की यात्रा की एक मंज़िल है।

जब हुसैन कर्बला पहुँचे तो धरती का नाम पूछा। किसी ने कह दिया ''कर्बला'' तो आप ने कहा- ख़ुदा की क़सम यहाँ हमारे ख़ेमे (शिविर) गाड़े जाएंगे।'' यह आज की तिथि का हाल है। फिर- यहीं हमारा रक्तपात होगा।'' यह 10 मोहर्रम के तीसरे पहर तक का हाल हो गया। इसके पश्चात् कहा- ''यहीं हमारी मर्यादा और शताब्दियों की परम्परा का विनाश होगा।'' यह 10 मोहर्रम के तीसरे पहर के पश्चात् से हुसैन के घर वालों की रिहाई के काल तक की सम्पूर्ण परिस्थिति है।

वह इस्माईल के बलिदान की याद थी और यह हुसैन के बलिदान की याद है। इस्माईल के बलिदान के 10 दिन बलिदान तक समाप्त हो गए परन्तु हुसैन के बलिदान के प्रथम 10 दिन उनके बलिदान तक हैं ये भाई के दिन हैं। और दूसरे 10 दिन हुसैन के बलिदान के पश्चात् से आरम्भ होते हैं ये 10 दिन इमाम हुसैन की बहन ''ज़ैनब'' के हैं। हुसैन का बलिदान तो 10 दिन के भीतर ही हुआ परन्तु दूसरे 10 दिनों की संख्या अंगिनत हैं जबकि रिहाई दूसरे वर्ष हुई हो तो अब वर्ष का प्रत्येक दिन ''ज़ैनब'' का हो गया। वह हुसैन का बलिदान था और यह ज़ैनब का बलिदान है।

अब मुसलमान निर्णय करें, कि अल्लाह के ख़लील (इब्राहीम) के पुत्र का बलिदान हो तो याद स्थापित करें और अल्लाह के हबीब (मुहम्मद) के पुत्र का बलिदान हो तो याद मनाना बिदअत (पाप) हो? यद्यपि कि इब्राहीम से हमारा सम्बन्ध केवल विश्वास पर आधारित है, रचनात्मक रूप से नहीं। तो प्रथम कालीन रसूलों की तो याद मनाई जाने योग्य हो और अपने रसूल की कार्यवाहियों की याद न मनाई जाए?

अब कहा जाता है कि याद शोक के रूप से क्यों सम्पन्न की जाए प्रसन्नता पूर्वक याद क्यों न सम्पन्न हो। यह बात बहुत समझ-बूझ कर कही जा रही है याद रहे कि अपनी प्रसन्नता में हम ही सम्मिलित रहेंगे और इस प्रकार वह याद सर्वदा शेष न रहेगी। परन्तु शोक पूर्ण

स्मृति में समस्त जग सम्मिलित हो जाता है और इस प्रकार यह याद सर्वदा शेष रहेगी। लोग यह चाहते हैं कि हम हुसैन की याद को अप्राकृतिक बना दें परन्तु हम इस धोखे में आने वाले नहीं। दार्शनिक प्रश्नों का उत्तर दर्शन ही से दिया जा सकता है हुसैन की याद प्रसन्नता पूर्वक उसी समय मनाई जाती जब इस्माईल के बलिदान की याद शोकपूर्ण रूप में मनाई जाती। फिर सुनिए और याद रखिए कि यदि इस्माईल के बलिदान की स्मृति शोक पूर्ण रूप से सम्पन्न होती तो हुसैन की स्मृति प्रसन्नता पूर्वक सम्पन्न होती। परन्तु वह ईद है। ईद किसकी? यही तो कि नबी का पुत्र बलिदान से बच गया। तो अब मोहर्रम में मातम कीजिए, शोक मनाइये इस कारण कि तुम्हारे रसूल के पुत्र का वध कर डाला गया और पैग़म्बर का बाग़ लुट गया।

फिर कहा जाता है कि रसूल के पुत्र का बलिदान हुआ और वे उच्च स्तर पर पहुँचे तो इस पर प्रसन्न होना चाहिए परन्तु इस उच्च स्तर की महानता को मुहम्मद साहब अधिक जानते हैं या ये नाम मात्र मुसलमान? तो फिर देखिए कि 10 मोहर्रम को रसूलुल्लाह प्रसन्न दिखाई दिए या शोकातुर?

सुन्नियों के प्रसिद्ध और माननीय ग्रन्थ (पुस्तक) ''सही तिरमिज़ी'' में यह घटना लिखी है कि दस मोहर्रम की संध्या को उम्मे सलमा (रसूलुल्लाह की एक पत्नी) ने मुहम्मद साहब को नंगे सिर देखा इस प्रकार कि उनके सिर और दाढ़ी पर मिट्टी पड़ी थी हाथ में एक शीशा है जिसमें ताज़ा रक्त जोश मार रहा था, और कहा कि मेरा पुत्र हुसैन शहीद कर दिया गया यह मेरे सिर और दाढ़ी पर कर्बला की मिट्टी है और शीशे में हुसैन और उनके साथियों का रुधिर है जिसे मैं एकत्र करता रहा हूँ।

रसूल अपने हुसैन पर रो रहे हैं तो हुसैन अली अकबर (हुसैन के पुत्र) के शव पर रो रहे हैं। अब कोई न कहे कि यह रोना हुसैन की प्रतिभा के विरूद्ध है। रसूल आजीवन रोए और मृत्यु के पश्चात भी रोए। इसी प्रकार हुसैन भी रो रहे हैं, यह धीरज के विरूद्ध नहीं। धीरज तो यह है जो युवक को रो चुका वह छः महीने के बालक का भी बलिदान देने के लिए उसे हाथों पर लाता है।

कभी कहा जाता है कि कहाँ तक रोओगे? बस रो चुके इतने दिन कहीं रोया जाता है। मैं कहता हूँ कि यही तो प्राकृतिक प्रबन्ध है। यदि उन्हें वाह्य रूप से रो लेने दिया जाता जिन्हें रोने का अधिकार था तो कदाचित इतने समय तक न रोया जाता। हुसैन को रोने वालों की कमी न थी, ज़ैनब और उम्मे कुलसूम ऐसी बहनें, लैला और रबाब ऐसी पत्नियाँ, सकीना और फ़ातिमा ऐसी बेटियाँ, परन्तु उन्हें रोने ही कब दिया गया, इधर शहादत का समाचार मिला, उधर दुश्मन आग लेकर आ गए। अब पर्दे के लिए जिहाद करें कि रोएं और फिर ग्यारहवीं को पूज्यनीय स्त्रियाँ बन्दी बना दी गईं और कूफ़ा तथा शाम (सीरिया) के मार्ग में यदि किसी के नेत्र में आँसू आता तो शत्रु नैज़ा (बल्लम) की नोक से कष्ट देते थे। उनके धीरज का बदला अल्लाह ने उनको ऐसा दिया कि तुम्हारे लिए धरती और आकाश रोएंगे। जो आज भी हुसैन का मातम कर रहे हैं वे सब ज़ैनब का साथ दे रहे हैं। ज़ैनब भी रोने ही की प्यासी थीं- यद्यपि की जब सातवीं मोहर्रम को हुसैन और हुसैन के घरवालों पर कर्बला में पानी बन्द हुआ था फिर आज तक इतना पानी न मिला था जो उनकी प्यास बुझाता परन्तु प्यास थी तो आँसू की अतः जब रिहाई का आदेश मिला तो यज़ीद ने कहा कि चाहें यहाँ रहिए चाहे मदीने जाइए आपको अधिकार है। यह रसूल के परिवार की विशेषता थी कि सय्यदे सज्जाद कहते हैं कि फूफ़ी से पूछे बिना कुछ नहीं कह सकता।

कदाचित यह प्रथम अवसर था कि यज़ीद ने सय्यदे सज्जाद को बुलाया था, और ज़ैनब साथ न थीं, ज्ञात नहीं कि इतने समय में ज़ैनब पर क्या बीत गई। सम्भवतः भतीजे ने फूफी को द्वार पर पाया हो, जैसे ही भतीजा आया सिर से पैर तक देखा होगा। अन्तर का तो अनुभव कर ही लिया। आए हैं तो हथकड़ी तथा बेड़ी काटी जा चुकी है, तौक़ अलग किया जा चुका है। पूछने पर बताया कि यज़ीद ने रिहा कर दिया है, और कहा कि यहाँ रहें या मदीने जाएं। ज़ैनब ने पूछा कि फिर तुम ने क्या कहा? उत्तर दिया कि आपसे पूछे बिना मैं क्या कह सकता था।

शेष..... पेज 33 पर

थे और मार्ग में थे। उस समय हुर (हुसैन का एक शत्रु जो बाद में इमाम हुसैन की ओर आ गया और आपके प्राणों की रक्षा करते हुए शहीद हुआ) की सेना जो केवल इस कारण आयी थी कि इमाम हुसैन को आगे न बढ़ने दिया जाये वह भी जब पानी माँगती है तो हुसैन अपने इस शत्रु सेना को भी अरब के जलशून्य मार्गों में अपने बालकों एवं स्त्रियों का विचार किये बिना सारा पानी पिता देते हैं।

कर्बला के रण-क्षेत्र में लड़ते-लड़ते घावों एवं प्रहारों से चूर होकर जब भूमि पर गिरते हैं तथा परम पिता परमेश्वर के आगे शीश को भूमि पर टिका देते हैं। शिम्र (जिसने आप का गला काटा था) यह समझता है कि इमाम हुसैन हम लोगों के लिए अमंगल कामनायें कर रहे होंगे परन्तु जब कान लगा कर सुनता है तो हुसैन कह रहे थे कि हे अल्लाह! मेरे नाना (हज़रत मोहम्मद के अनुयायी) बहुत पापी हैं तू इनके पापों को क्षमा कर दे। कठिनाईयों एवं विपत्तियों के साम्राज्य में कठिनाईयाँ पहुँचाने वालों के लिए ही मंगल कामना करना यह है अहिंसा का अद्वितीय उदाहरण।

इसी प्रकार हमारे दूसरे धार्मिक अधिष्ठाता भी हमें अहिंसा का पाठ पढ़ाते रहे। अन्य धर्म-अधिष्ठाताओं के जीवन-काल से अहिंसा के उज्जवल एवं उत्कृष्ठ उदाहरण प्रस्तुत करने की अपेक्षा केवल इतना लिखने पर ही लेख समाप्त करता हूँ कि इस्लामी इतिहास, धार्मिक अधिष्ठताओं की इन अहिंसापूर्ण घटनाओं से परिपूर्ण है तथा इन्हीं घटनाओं ने महात्मा गाँधी और मिस्टर गिबन जैसे राष्ट्रीय एवं राजनीति के नेताओं को यह लिखने पर बाध्य कर दिया कि इस्लाम के प्रचार तथा प्रसार में तलवार का हाथ नहीं था बल्कि इस्लाम के धार्मिक नेताओं के नैतिक गुणों एवं अहिंसापूर्ण व्यवहारों ने इस्लाम के आगे लोगों के शीश नवा दिये।

शेष..... याद और यादगार

हज़रत अली की पुत्री है जो वैभवशाली राजनीति को पराजित कर रही है। वे जानती हैं कि यह समय की राजनीति का दबाव है जो हम दुखियों का दिल बहलाने पर विवश कर रहा है। आप ने कहा कि मेरी ओर से यज़ीद से कहो कि अभी हम अपने स्वामी को रोए नहीं हैं पहले एक घर ख़ाली करा दे कि हम अपने सम्बन्धियों को रो लें। फिर बताएंगे कि हब हम यहाँ रहेंगे या मदीने वापस जाएंगे।

लीजिए हुसैन का मातम करने वालों की पंक्ति बैठ गई अब जो समाचार मिला कि हुसैन का मातम उनके सम्बन्धी कर रहे हैं तो शोकपूर्ण वस्त्र पहन कर कुरैश के परिवार की भद्र स्त्रियाँ आईं वस्तुतः हज़रत ज़ैनब ने इस पंक्ति के साथ सहस्त्रों हृदय में हज़रत इमाम हुसैन के मातम की पंक्ति बिठा दी। हम सब भी आज ज़ैनब की बिठाई हुई पंक्ति पर हैं।

अब कौन बता सकता है कि इस प्रभाव को कि ''लैला'' की ज़बान और अली अकबर का मातम, हसन की विधवा की ज़बान और क़ासिम का व्याख्यान, ज़ैनब की ज़बान और हुसैन का मर्सिया, रबाब की ज़बान और अली असग़र का नौहा और फिर तो हज़रत ज़ैनब ने सीमा स्थापित कर दी आप सब को अनुभव है कि अन्तिम में पढ़ने वाले के व्याख्यान के पश्चात जब आकृतियाँ आती हैं तो क्या प्रभाव होता है, यद्यपि कि उन आकृतियों में क्या होता है? एक ताबूत जिसमें शव कोई नहीं, एक झूला जिसमें बच्चा कोई नहीं उपस्थित, एक दुल-दुल जिस पर कोई सवार नहीं। इससे क्या हाहाकार होती है- और वहाँ हज़रत ज़ैनब कहती हैं कि यज़ीद से कहो कि जहाँ इतना किया है हमारे सम्बन्धियों के कटे हुए शीश भी भेज दे- लीजिए मातम करने वाले पंक्ति बाँधे खड़े हैं, और अटठारह शीश लाए जाते हैं, हाय हुसैन! हाय अब्बास! हाय अली अकबर!!!

(इमामिया मिशन लखनऊ प्रकाशन न० 515
मुहर्रम 1387हि०/अप्रैल 1967ई०)